दलित विमर्श और ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताएँ

दिलना के
शोधार्थी,
केरल केन्द्रीय विश्वविद्यालय
कासरगोड

आज विमर्श का दौर है। विमर्श का शाब्दिक अर्थ लिया जाए तो उसका मतलब है परामर्श, सलाह आदि । विमर्श की संकल्पना पश्चिमी देशों से उभर कर षआयी है । आज हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, किन्नर विमर्श, वृद्ध विमर्श आदि अनेक विमर्श का आगमन हो चुका है । साहित्य का वास्तविक उद्देश्य मानव की मुक्ति रहा है । जब तक एक रचनाकार का आंतरिक संघर्ष स्पष्ट, मुखर और व्यवस्थित नहीं होगा, जब तक वह बाह्य समस्याओं से लड नहीं सकता । बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हिन्दी साहित्य में दलित चेतना, दलित विमर्श की ओर आलोचकों का ध्यान आकृष्ट हआ है । दलित विमर्श ने पुराने पारंपरिक मानदण्डों के समस्त समीकरण बदल दिए हैं । समकालीन परिप्रेक्ष में जिस गहराई के साथ दलित विमर्श आगे बढ रहा है, वह अपने अंदर अन्य विमर्शों को भी समेटता है। जैसे- स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श, अस्मिता विमर्श आदि ।

भारतीय समाज में सदियों से यह समाज जाति व्यवस्था का शिकार बना हुआ था। सवर्णों ने इन पर बहुत अत्याचार अन्याय व शोषण किया है। दलित शब्द को लेकर विद्वानों में काफी मतभेद है। शब्दकोश के अनुसार दलित शब्द के भिन्न भिन्न अर्थ मिलते हैं। दलित शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के दल दातु से हुई है। दलित का शाब्दिक अर्थ है मसला हुआ मर्दित, दबाया या कुचला हुआ लोग । दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र में ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं – "जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ठ, मर्दित पस्त, हिममत, हतोत्साहित वंचित वह दलित।"[1] डॉ श्यौराज सिंह बेचैन ने लिखा है कि जिसे भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है वह दलित है । डॉ बाबासाहेब आंबेडकर के अनुसार दलित जातियाँ वे है जो अपवित्रकारी होती है, इनमें निम्न श्रेणी के सभी लोग आते हैं।

दलित साहित्य की निर्मिती के मूल में डॉ अंबेडकर की विचारधारा मुख्य रूप से काम कर रही है। उनकी विचारधारा के केंद्र में मूल मनुष्य है। इसलिए उन्होंने मानवता को केंद्र में रखा है । शरण कुमार लिंबाले के अनुसार "दलित साहित्य अपना केंद्र बिंदु मनुष्य को मानता है। डॉ बाबासाहेब आंबेडकर के विचारों से दलित को अपनी गुलामी का एहसास हुआ। उनकी वेदना को वाणी मिली। क्योंकि उस मूल समाज को डॉ बाबासाहेब आंबेडकर के रूप में अपना नायक मिला। दलितों की वह वेदना दलित साहित्य की जन्मदात्री है। दलित साहित्य की वेदना मैं की वेदना नहीं है समाज की वेदना है।"[2] दलित साहित्य समाज सापेक्ष है। साहित्य के मूल संवेदना के साथ दलित साहित्य ने मनुष्य की स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व की भावना को

सर्वोपरी माना है। विश्व साहित्य में भी दलित साहित्य ने अपनी अलग पहचान बनायी है। अस्पृश्यता की वेदना ही उसका प्राण है। जब तक अस्पृश्यता, जातिप्रथा, वर्ण-व्यवस्था का उन्मूलन नहीं होगा तब तक समानता की स्थापना नहीं होगी। दलित साहित्य आंदोलनधर्मी- बहसधर्मी है। दलित रचनाएँ विशेषकर आलोचनात्मक किताबें दलित साहित्य की पूंजी है । ओमप्रकाश वाल्मिकी की पुस्तक दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र दलित साहित्य की बहसों को को समेटने और अंबेडकरवाद को दलित साहित्य के सौन्दर्यशास्त्र के केन्द्र बनाने का प्रयास है। दलितोत्थान केलिए साहित्य में दलितों का जीवन चित्रण होना अनिवार्य है। आज दलितों में चेतना जागृत हो रही है। मानवीय सत्ता की स्थापना, शोषण रहित समाज व्यवस्था की निर्मिति दलित संघर्ष की आत्मा रही है। अतः दलित साहित्य सामाजिक क्रांति और नए आन्दोलन का परिणाम है। इसकी आंतरिक ऊर्जा दलित चेतना है जो डॉ.अम्बेडकर के जीवन दर्शन और बंधुत्व के तत्व ज्ञान से संचालित है।

दलित विमर्श सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक सभी स्तरों पर हिस्सेदारी और अपने अधिकारों की मांग को लेकर हाशिए पर यह लोग संघर्ष पर उतरे। दलितों ने प्रतिरोध, आंदोलन और संघर्ष को अपना मुक्ति मार्ग के रूप में स्वीकारा है। दलित साहित्य दलितों की स्थितियों, सीमाओं और संभावनाओं को सामाजिक परिपेक्ष में चित्रित करता है। उत्तर आधुनिकता के फल स्वरुप साहित्य में दलित विमर्शगत साहित्यिक आंदोलन का प्रारंभ हुआ। हिंदी साहित्य में दलित साहित्यकारों ने न केवल दलित जीवन का वास्तविक चित्रण प्रस्तुत किया बल्कि प्रस्तावित वर्णवादी जाति व्यवस्था को तहस-नहस करने के लिए आक्रोश और विद्रोह के साथ क्रांतिकारी स्वर भी प्रस्तुत किया। पीड़ा भरा नरकीय दलित जीवन को चित्रित करके दलित साहित्यकारों ने मैजूद जाति व्यवस्था की गंदगी को प्रकाशित किया। हिंदी दलित साहित्य ने अपने मानवीय स्वर के आधार पर दर्द को जागृत करने के साथ-साथ समाज के लोगों को भी मानवीय मूल्यों पर सोचने के लिए विवश किया। फिर भी दलित साहित्य नकार का साहित्य रहा है। दलित साहित्य यह स्पष्ट करता है कि वह अपने निश्चित अधिकारों को प्राप्त करने के लिए अब पीछे नहीं हटेगा।

हिन्दी दलित साहित्य का प्रारंभिक दौर कविताओं तक सीमित था। लेकिन आज अनेक विधाओं - कहानी, उपन्यास, आत्मकथा, आलोचना, नाटक, संस्मरण आदि में दलित लेखन हो रहा है। समकालीन दलित साहित्य मानवीय मूल्यों की भूमिका पर सामंती मानसिकता के विरुद्ध आक्रोश जनित संघर्ष है। इनका मूल स्वर दलित जीवन की व्यथा-कथा, सामंती आतंक और मनुवादी व्यवस्था के विरुद्ध तीव्र आक्रोश और विरोध दर्ज कराना है। दलितों के भोगे हुए सच पर आधारित दलित साहित्य का लक्ष्य एक समता मूलक समाज की स्थापना करना है।

ओम प्रकाश वाल्मीकि हिंदी दलित साहित्य के सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार रहे हैं। दलित जीवन के अनुभव से वे स्वयं गुजरे हैं। इन्होंने दलितों की वाणी को ही अपने साहित्य में चित्रित किया है। इनके साहित्य में दलित जीवन का नग्न यथार्थ प्रकट हुआ है। इनके साहित्य से स्पष्ट होता है कि इनका साहित्य अनुभूति और अभिव्यक्ति का सामंजस्य स्थापित करता है। ओम प्रकाश वाल्मीकि का संपूर्ण साहित्य दलित जीवन से हमें रूबरू करवाता है। हिंदी में दलित कविता का आरंभ बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक में हुआ। इसकी

प्रेरणा डॉ अंबेडकर की विचारधारा, महात्मा फुले का संघर्ष, मार्क्स की क्रांतिकारी दृष्टि, मराठी के दलित साहित्य से मिली है। दलित समाज के लोगों ने जिस पीडा को सहा है वह दलित साहित्यकारों ने अपनी कविताओं के माध्यम से व्यक्त की है। उनकी कविताओं में वेदना भी है और आक्रोश भी। हिंदी दलित कविता के पहचान कराने वाले कवियों में ओमप्रकाश वाल्मिकी का नाम सबसे आगे आता है। उनका तीन कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं – 'सदियों का संताप', 'बस!! बहुत हो चुका' और 'अब और नहीं'।

ओमप्रकाश वाल्मीकि का जीवन बचपन बड़े ही संघर्ष की अवस्था में बीता। उन्होंने अपनी पीड़ा को सहते हुए अपने तथा अपनी जाति के दर्द को कविता एवं कहानियों के माध्यम से वर्तमान समाज के सामने प्रस्तुत किया। ओमप्रकाश वाल्मीकि के संपूर्ण कविताओं में हिन्दु वर्ण व्यवस्था के प्रति विद्रोह है। उस व्यवस्था ने दलितों को सभी अधिकारों से वंचित रखा है। ओम प्रकाश वाल्मीकि हिंदू परंपरा को ठुकारते हैं और जाति के प्रति अमानवीयता प्रकट करते हुए लिखते हैं–

"स्वीकार्य नहीं है मुझे । जाना
मृत्यु के बाद ।
तुम्हारे स्वर्ग में ।
वहाँ भी तुम । पहचानोगे मुझे
मेरी जाति से ही ।"[3]

आज दलित साहित्य, आदिवासी साहित्य और स्त्री साहित्य ने हजारों सालों की चुप्पी तोडी है और उस चुप्पी के कारण हुए शोषण का सार्थक और जरूरी प्रतिरोध विद्यमान है। आज उन्हें समझ आया कि अपने हक के लिए आवाज उठानी होगी स्वयं बोलना होगा। अपने हिस्से का सच कोई दूसरा नहीं कहेगा आपको खुद ही कहना पड़ेगा, बस बहुत हो चुका। 'बस्स!! बहुत हो चुका' में कवि ने आक्रोश की अभिव्यक्ति की है। दलितों के आक्रोश को व्यक्त करने के साथ-साथ उस आक्रोश की वास्तविकता के सम्बन्ध में वह कहता है

"और, मैं चुपचाप सुनता रहा
निरंतर बजता रहा ।
मेरे भीतर अनहद नाद
सन्नाटों की खामोश चीख सा ।"[4]

दलित समाज के लोग सभी प्रकार के शोषणों को सहता रहा, पिसता रहा। इसके परिणामस्वरूप एक खामोश चीख सा भाव उनके अंदर से निकल आया है। यातना नामक कविता में वे कहते हैं –

"जब अतीत और वर्तमान

मिलकर एक हो जायें

टूटती सिसकियाँ

चुप हो जायें ।"[5]

अतीत से वर्तमान तक जितनी अत्याचार व शोषण सहे उनका कोई प्रतिशोध नहीं हुआ। लेकिन वहाँ आक्रोश की सिसकियाँ टूटती-सी नजर आ रही है। बार बार दर्द सहने के बाद उनमें आक्रोश की चिंगारियाँ नज़र आने लगी । वह अपने साथ हो रहे अन्याय के प्रति विद्रोह प्रकट करने लगा। वाल्मीकि जी ने अपनी कविताओं में वर्ण-व्यवस्था के सामने सदियों का संताप खोलकर बाहर निकाला । वे लिखते हैं –

"बस्स

बहुत हो चुका

चुप रहना

निरर्थक पडे पत्थर

अब काम आयेंगे सन्तप्त जनों के ।"[6]

ओमप्रकाश वाल्मिकी की कविताओं में समकालीन दर्शन का बोध भी मिलते हैं। सवर्ण लोग दलितों को घृणा की दृष्टि से देखते थे । दलितों को मनुष्य न मानने की इस गंधे सोच के प्रति उन्होंने प्रश्न उठाये है-

"जिस रास्ते से चलकर तुम पहुँचे हो

इस धरती पर

उसी रास्ते चलकर आया मैं भी,

फिर तुम्हारा कद इतना उँचा

कि आसमान भी छू लेते हो।"[7]

समाज आज भी दलितों से यही उपेक्षा रखता है कि वे पशुओं की तरह जिये । दलितों का समाज में आगे बढते हुए वे नहीं देख सकते । इनकी कविताओं में दलित जीवन की पीडाओं का चित्रण के मिथक कथाओं के माध्यम से भी चित्रित हुआ है। दलित समाज के गरीबी का दारुण चित्रण भी प्रस्तुत किया है इन्होंने। इनका संपुर्ण साहित्य दलित जीवन का दस्तावेज है। उनकी कविताओं में दलित की वेदना, विद्रोह, करुणा, आक्रोश, प्रतिशोध, मनुष्य में समानता का भाव आदि मिलते हैं । उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से दलित समाज को मुक्ति दिलाने की कोशिश की।।

संदर्भ

1. दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृ.13
2. भारतीय दलित साहित्य, सं. पुन्नी सिंह, पृ.325
3. हरिजन से दलित, सं. राजकिशोर, एक दलित की आत्मकथा, ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृ.16
4. बस्स!! बहुत हो चुका, आदिम रूप, ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृ.28
5. बस्स!! बहुत हो चुका, यातना, ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृ.35
6. बस्स!! बहुत हो चुका, ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृ.80
7. बस्स!! बहुत हो चुका, वे भूखे हैं, ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृ.77